International Journal of Academic Research
ISSN: 2348-7666; Vol.7, Issue-7(1), July, 2020
Impact Factor: 6.023; Email: drtvramana@yahoo.co.in

समकालीन हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य के स्वर

डॉ.कुमार नागेश्वर राव,
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, श्री.वाई.एन.महाविद्यालय (स्वायत्त)
नरसापुर – 534275

भारतीय समाज की जातिवादी संरचना ने व्यक्ति में असुरक्षा की भावना पैदा की । जातीय स्तरीकरण में हर तथाकथित नीची जाति अपने से ऊँची जाति के द्वारा अपमानित होती है । सामाजिक उपेक्षा की इस मानसिकता ने भारतीय समाज को आधुनिक नहीं होने दिया । भारतीय समाज में कई सदियों से वर्ण व्यवस्था प्रचलन में थी । इस समाज में दलित कहे जानेवाले लोग अपमान एवं शोषण के शिकार वन कर दुर्भर जीवन बिताते थे । अछूत-प्रथा प्रचन में थी । हरिजनों केलिए मंदिर-प्रवेश निषिद्ध किया गया था । इनको शिक्षार्जन के अवसर नहीं दिये गए थे । मानव-अधिकारों से ये लोग पूर्णतः वंचित रहे थे । वर्तमान युग में इस स्थिति में थोडा-सा परिवर्तन आया । ग्रामीण भारतीय समाज के कई प्रांतों में अब भी दलित लोग सवर्णों के अत्याचारों के शिकार बनने लगे । महर्षि दयानंद ने वर्ण-व्यवस्था पर पुनर्विचार करने की माँग को लेकर स्थिति में बदलाव लाने की भरसक चेष्टा की है। हरिजन-उद्धार को अपना लक्ष्य घोषित कर महात्मागाधी ने इस सामाजिक विडंबना को दूर करने का प्रयास किया है । महात्मा ज्योतिबा फूले ने अपने क्रांतिकारी विचारों से दलितों की स्थिति में सुधार लाने की दिशा में जन-चेतना को जागृत किया है । डॉ.बाबासाहेब अंबेडकर के विचारों से प्रेरित हो कर कई समाज सेवी संस्थाओं और सुधारकों ने दलितों के कल्याण को अपना लक्ष्य घोषित कर स्थिति में आमूल परिवर्तन लाने की चेष्टा की है ।

दलित आत्मकथाकारों ने अपनी प्रत्यक्ष अनुभूतियों को स्वर देकर विश्वसनीय ढंग से दलितों पर सवर्णों के अत्याचारों के यथार्थ चित्र अपनी आत्मकथाओं में प्रस्तुत किये । अनुभूतियों की ईमानदार अभिव्यक्ति और जीवनानुभवों की प्रामाणिकता के कारण इनकी आत्मकथाएँ विश्वसनीय बन पडीं और दलितों की जीवन-शैली की यथार्थ तस्वीरें करने में इनकी सफलता असंदिग्ध सिद्ध हुई । हिन्दी आत्मकथा के विकाश में हिन्दी साहित्यकारों का विशेष योगदान रहा है । आत्मकथा हिन्दी गद्य की एक आधुनिक विधा है । जो निरंतर प्रगति के पथ पर है । हिन्दी में कई पुरुष एवं महिला दलित आत्मकथाकारों ने अपनी कृतियों से इस विधा को समृद्ध बनाया है । आत्मकथा में लेखक अपने निजी जीवन से जुडे अनुभवों, भावों, विचारों तथा अनुभूति को देशकाल और युगीन परिवेश के समांतर बिंब-प्रतिबिंब में कलात्मक एवं प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त करता है । समकालीन दलित आत्मकथाओं में "**अपने-अपने पिजरे**", "**जूठन**", "**तिरस्कृति**", "**मेरी पत्नी और भेडिया**", "**मुर्दहिया**", "**दोहरा अभिशाप**", "**शिकंजे का दर्द**" आदि विशेष उल्लेखनीय हैं । इन आत्मकथाओं में दलितों की

वैयक्तिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है । मोहनदास नैमिशरॉय ने **अपने-अपने पिंजरे (1995)** में अपने व्यापक जीवनानुभवों के माध्यम से दलितों के आर्थिक व सामाजिक शोषण के विभिन्न रूपों को उद्घाटित किया है । ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा का शीर्षक है "जूठन", जिसमें साफ-सफाई का काम करनेवाले परिवार के बालक के रूप में अपने यातनामय वचपन का वर्णन किया है। इसमें एक ऐसे बालक के बडे होने के क्रम में झेली यातनाओं का हृदयस्पर्शी निचोड प्रस्तुत किया गया है, जो कि दलित, उपेक्षित तथा अभागा था । इसी प्रकार इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि तिरस्कार और अपमान से परिपूर्ण जीवनानुभव ने उनको आत्मकथा लिखने की प्रेरणा प्रदान की है । इसमें वाल्मीकि भंगी जाति के युवक ने किस तरह अपने पापी पेट के लिए जूठन इकट्टा किया, इसका कारुणिक चित्र प्रस्तुत किया गया है । ओम प्रकाश वाल्मीकि को अपने स्कूल में भर्ती होने के बाद शिक्षण में अनेक अडचने आयीं, क्योंकि स्कूल में अध्यापक दलित छात्रों के प्रति घृणापद् व्यवहार करते थे । अध्यापक उनको जातिगत गालियों का प्रयोग कर निराश करने का यथाशक्ति प्रयास करते थे । इन सारी घटनाओं का मार्मिक चित्रण इस आत्मकथा में हुआ है । इस कृति में सवर्ण जाति के लोगों द्वारा दलितों पर किये गए अत्याचार, शोषण, दमन का ऐसा बयान है जो पाठक की आँखें खोल देता है ।

कौसल्या बैसंत्री ने "**दोहरा अभिशाप**" (1999) आत्मकथा लिखी, जो काफी चर्चित रही । उनको आत्मकथा लिखनेवाली पहली दलित लेखिका होने का गौरव प्राप्त है । दलित जाति की होने के कारण लेखिका ने बहुत ही ईमानदारी से दलित महिलाओं के दुख-दर्द को समाज के सामने लाने का सार्थक प्रयास किया है । इसमें लेखिका ने उनकी माँ **भागीरथी** तथा नानी **आजी**, और स्वयं के जीवन संघर्ष का मार्मिक चित्रण किया गया है । "**दोहरा अभिशाप**" भारतीय दलित समाज में दलित स्त्रियों की आजादी के आरंभ का सूर्योदय बन प्रकट हुआ । लेखिका ने अपनी पुस्तक में यह बताया है – पुत्र, भाई, पति सब मुझ पर नाराज हो सकते हैं, परंतु मुझे भी तो स्वतंत्रता चाहिए कि मैं अपनी बात समाज के सामने रख सकूँ । मेरे जैसे अनुभव और भी महिलाओं के सामने आये होंगे, परंतु वे समाज और परिवार की भय से सामने आये होंगे परंतु वे समाज और परिवार के भय से अपने अनुभव समाज के सामने उजागर करने से डरतीं और जीवन भर घटन में जीती हैं, समाज की आँखें खोलने केलिए ऐसे अनुभव सामने आने की जरूरत है ।"[1] उनकी माता ने गरीबी के चलते शिक्षा न होने से मजदूरी करके परिवार चलाया, परंतु उनके इरादे बहुत महान थे, जिनके सामाने कुछ भी खडा

संदर्भ संकेत :

[1] कौसल्या वैसंत्री – दोहरा अभिशाप – पृ.सं.36

नहीं रह सकता । यह सिर्फ एक दलित महिला का संघर्ष नहीं, अपितु संपूर्ण दलित महिलाओं के जीवन से संबंधित है ।

सूरजपाल चौहान की आत्मकथा "**सिरस्कृत**" में भारतीय समाज में दलितों की स्थिति और उनके जीवन की सच्चाईयों को प्रस्तुत किया गया है । सवर्ण वर्ग के द्वारा घृणा, शोषण व तिरस्कार, सामाजिक भेदभाव तथा ऊँच-नीच के प्रकरणों को यहाँ विवेचित किया गया है । आत्मकथा के माध्यम से लेखक ने दलित जाति के प्रति वर्ण-व्यवस्था के पशुत्व तथा भेदभावपूर्ण दृष्टिसे सिकुडती मानवता का चित्रण प्रस्तुत किया है । चौहान ने दर्शाया है कि "शहर या गाँव दोनों ही वातावरण के छात्रों के शोषण में कोई अंतर नहीं मिलता । शहर के अध्यापक दलित छात्रों को सफाई करने तथा जूते बनाने और गाँव के अध्यापक दलित छात्रों को खेतों में काम करने के वास्ते उनको अनपढ़ रखना चाहते हैं ।"[2] यह भी दर्शाया गया है कि "विद्यालयों में दलित छात्रों के साथ अपमानजनक व्यवहार किया जाता है । उनको अन्य वर्णों के छात्रों के साथ नहीं विठाया जाता । शुभ कार्यों से उन्हें दूर रखा जाता है । उनकी उपेक्षा की जाती है । इस आत्मकथा में लेखक ने सवर्णों के अहंकार और दलितों की हीन भावना के द्वन्द्वात्मक संबंध के ज्वलंत उदाहरण देकर स्थिति की जटिलता को अंकित करने में सफलता प्राप्त की है, जिन्होंने उनके वाल मन पर स्थायी चिह्न छोडे ।"[3] लेखक ने राजनीतिक क्षेत्र में दलितों के मानव अधिकारों के हनन की ओर भी संकेत किया है । इस कृति में दलित जागरण केलिए शिक्षा के महत्व को विभिन्न संदर्भों द्वारा रेखांकित किया गया है । लेखक को शोषण के प्रति दलितों के असंतोष और विरोध को चित्रित करने में विशेष सफलता प्राप्त हुई है ।

डॉ. धर्मवीर की आत्मकथा "**मेरी पत्नी और भेडिया**" में लेखक ने अपने परिवेश, पितृपरंपरा, जीवन संघर्ष, पारिवारिक विडंबनाओं और वेदनाओं के साथ-साथ वीसवीं सदी की वर्ण आधारित समाज संरचना और उसके हाशिये के समाज के यथार्थ का पारदर्शिता के साथ चित्रण किया है। इस आत्मकथा में एक ओर लेखक के परिवार की विडंबनाएँ हैं तो दूसरी ओर सामंती पूँजीवादी कुरूपताएँ देखने को मिलती हैं । धर्मवीर की आत्मकथा "**मेरी पत्नी और भेडिया**" में अनेक चरित्र और प्रसंग हैं जो पाठक को सामाजिक दुनियादी प्रश्नों पर विचार करने केलिए विवश करते हैं । इस आत्मकथा में अवलोकन व आकलन के साथ महाकाव्यात्मक सघन औपन्यासिक ढ़ांचे का निर्माण हुआ है, इसी के साथ भारतीय वर्ण वादी समाज-निर्माण

[2] सूरजपाल चौहान – तिरस्कृत – पृ.सं.47

[3] पी.झाँसी – दलित चेतना : मेरा बचपन मेरे कंधों पर – पृ.सं.113

के नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, विधि-विधान और कानून की भी समीक्षा की गयी है और इस बात पर जोर दिया गया है कि यह अर्ध पूँजीवादी पर किस तरह अपना प्रभाव डालता है ।"[4]

तुलसीराम की आत्मकथा "**मुर्दहिया**" में तमाम विरोधी परिस्थितियों में अदम्य जिजीविषा और जीवन-संघर्ष की झलक देते हैं । इस आत्मकथा में वर्णित सच्चाइयों को नकारा नहीं जा सकता । यह आत्मकथा समाज-परिवर्तन की माँग करती है । "**मुर्दहिया**" में तुलसीराम अपनी पारिवारिक दशा के वारे में बताते हैं कि उन दिनों उनके घर की स्थिति खास कर उस दलित बस्ती के चमारों की आर्थिक स्थिति अपेक्षाकृत बेहतर थी । उनका परिवार संयुक्त परिवार था तथा उनके सोमरचाचा बाहर गाँव के चौधरी के कारण इनको व्यावहारिक रूप में न्यायाधीश की तरह अधिकार प्राप्त था ।"[5] तुलसीराम कहते हैं कि "मै ने अपना और समाज का यथार्थ इसमें रखा है, लेकिन आलोचक और महान लोग किसमें कुछ और ढूँढ निकालते हैं । वे इसे दलित रचना नहीं मानते क्योंकि इसमे स्थितियों के प्रति गुस्सा नहीं है ।"[6]इन आत्मकथाओं में दलित स्त्री-जीवन के विविध रूपों का अंकन पाया जाता है । घरेलू

[4] डॉ.धर्मवीर – मेरी पत्नी और भेडिया – पृ.सं.85

[5] तुलसीराम - मुर्दरिया – पृ.सं.57

[6] तुलसीराम - मुर्दरिया – पृ.सं.86

संदर्भ संकेत :

1. हिन्दी काव्य में दलित आत्मकथा – माता प्रसाद ।
2. दलित साहित्य की अवधारणा और स्वरूप – जगन्नाथ पंडित
3. दलित साहित्य : स्मरणिका – कमलेश्वर
4. दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र – डॉ.शरण कुमार लिंबाले
5. हिन्दी दलित आत्मकथाएँ : एक अनुशीलन – अभय परमार

पत्र-पत्रिकाएँ :

1. आजकल
2. संकल्य
3. स्रवंति
4. नारी अस्मिता
5. विवरण पत्रिका

हिंसा, यौन शोषण, आर्थिक शोषण और वर्ण व्यवस्था की शिकार बनी दलित स्त्री की समस्याओं का यथार्थ चित्रण इन आत्मकथाओं में पाया जाता है । अपने ही परिवार के सदस्यों और अन्यों के शोषण की शिकार बनी दलित स्त्रियों की प्रेरणा को इन आत्मकथाकारों ने स्वर दिया है । हीनताग्रन्थि, आर्थिक पराधीनता और अशक्तता के कारण यातनापूर्ण जीवन बितानेवाली स्त्रियों की मनोवैज्ञानिक स्थिति को इन्होंने स्पष्ट किया है । इन दलित आत्मकथाओं में दलित स्त्रियों की स्थिति में सुधार लाने की दिशा में दलित समाज में चेतना जागृत करने का प्रयास भी परिलक्षित होता है । शोषण से मुक्ति दिलाने में शिक्षार्जन, आर्थिक स्वतंत्रता, आत्मनिर्णय, वर्ण-भेद के विरुद्ध आक्रोश, परंपरागत स्त्री संहिता का विरोध आदि तथ्यों की भूमिका को महत्वपूर्ण घोषित किया गया है । आत्मकथा समाज में एक सामाजिक चेतना का सृजन, एक महत्वपूर्ण अस्तक्षेप माना जा सकता है । समाज में मानवीय संत्रास को साक्षी भाव से देखा जाता है । दलित आत्मकथाएँ, व्वस्था परिवर्तन की माँग करती है । हिन्दी में भी आत्मकथाकारों में ऐसे बिंब और यथार्थ प्रस्तुत किये है, जो पहले कभी नहीं थे । दलित समाज की प्रतिबद्धता का विस्फोट लेखकों की आत्मकथाओं में हुआ जिनहों ने विगत को पहचान कर नये की ओर कदम बढाया ।